"रीतिकालीन काव्य की विशेषताएँ"

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने अपने 'हिन्दी साहित्य का इतिहास' में संवत् 1700 वि० से संवत् 1900 वि० अर्थात् सन् 1643 ई० से सन् 1843 ई० तक के कालखण्ड को रीतिकाल नाम दिया है। आचार्य शुक्ल के अनुसार इस काल में रीति तत्व की प्रधानता को ध्यान में रखते हुए इसका नामकरण रीतिकाल किया गया है। रीतिकाल के कवि मानवता की ओर उन्मुख न होकर किसी राजा या व्यक्ति विशेष की ओर उन्मुख थी। रीतिकालीन कवि जनता का कवि न होकर 'राजदरबारी' कवि थे। इसलिए उनके काव्य में अलंकरण की प्रधानता, चमत्कार प्रदर्शन एवं शृंगारिकता का आना स्वाभाविक था। इस काल का सम्पूर्ण काव्य में रूप-गुण-सम्पन्न नारी की कामोद्दीपक चेष्टाओं, क्रीड़ाओं आदि के सौन्दर्य निरूपण की प्रधानता है। सामान्यतः रीतिकालीन काव्य की विशेषताएँ इस प्रकार हैं—

रीति निरूपण —

रीतिकालीन कवियों की प्रधान प्रवृत्ति 'रीति निरूपण' अर्थात् लक्षण ग्रन्थों की रचना करना है। इसी प्रवृत्ति के आधार पर आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने इस काल का नाम रीति-काल रखा है। रीतिकालीन कवियों के द्वारा संस्कृत काव्यशास्त्र को हिन्दी में रूपान्तरित किया गया है। इस काल के कवियों ने विभिन्न काव्यांगों के लक्षण एवं उदाहरण देते हुए

लक्षण ग्रन्थों की रचना की। इन कवियों का लक्षण ग्रन्थ रचयिताओं का उद्देश्य सामान्य पाठकों को काव्यशास्त्र की जानकारी कराना तथा काव्यशास्त्र की मर्मज्ञता का प्रदर्शन करना रहा है। इस काल की रीति निरूपक रचनाएँ — केशवदास की कविप्रिया, चिन्तामणि की कविकुलकल्पतरु, शृंगार मंजरी, मतिराम की ललित ललाम, मोप की रामचन्द्राभरण, भूषण की शिवराज भूषण, देव की रस विलास, दूलह की कविकुल-कण्ठाभरण, भिखारीदास की काव्य-निर्णय, रसलीन की अंगदर्पण आदि हैं।

शृंगारिकता —

'शृंगार' रीतिकालीन कवियों के काव्य का केन्द्र-बिन्दु है। इस काल के काव्य में नखशिख चित्रण के द्वारा नारी के रूप-सौन्दर्य का निरूपण किया गया है। राधा-कृष्ण की प्रेम लीलाओं का वर्णन विविध प्रकार से किया गया है, जिसमें भक्ति भावना का लेश मात्र भी नहीं है। रीतिकालीन दरबारी परिवेश एवं कामुक मनोवृत्ति के कारण शृंगार एवं उससे सम्बन्धित विषय ही इस काल के कवियों को अधिक प्रिय रहे हैं। इस काल के कवियों की शृंगारिकता में रूप लिप्सा, भोगेच्छा, विलासिता एवं शारीरिक सुख की कामना ही अधिक रही है। डॉ० नगेन्द्र के अनुसार, "सच्चा चाहे जैसा भी रहा हो, इसमें ढली शृंगारिकता ही।"

शृंगार रस के दो भेद — संयोग शृंगार एवं वियोग शृंगार माने गये हैं। रीतिकालीन काव्य में इन भेदों का चित्रण कवियों ने किया है। रीतिकालीन कवियों ने

अपने काव्य में श्रृंगार का इतना अधिक वर्णन किया है, जिसके आधार पर विश्वनाथ प्रसाद मिश्र ने इस काल को 'श्रृंगार-काल' कहा है। इस काल के कवियों ने संयोग का ऐसा विशद चित्रण किया है कि उसमें अश्लीलता का समावेश हो गया है, विशेष कर उन स्थानों पर जहाँ नायिका के रूप का वर्णन या विपरीत रति का वर्णन किया गया है—

"पार्‌यौ सोर विपरीत रति रूपी सुरत रनधीर।
करत कोलाहल किंकिनी गह्यौ मौन मंजीर॥"

रीतिकालीन कवियों के श्रृंगार वर्णन के सम्बन्ध में डॉ० भगीरथ मिश्र का मत है कि, "श्रृंगारिकता के प्रति उनका दृष्टिकोण मुख्यतः भोगपरक था, इसलिए प्रेम के उच्चतर सोपानों की ओर वे नहीं जा सके। प्रेम की अनन्यता, एकनिष्ठता, त्याग, तपश्चर्या आदि उदात्त पक्ष उनकी दृष्टि में बहुत कम आए हैं।" रीतिकालीन कवियों के श्रृंगार वर्णन में रूपलिप्सा, प्रेमजन्य विलासिता, शारीरिक सुख की कामना, भोगेच्छा एवं नारी के प्रति सामन्ती दृष्टिकोण आदि परिलक्षित होता है—

(देव) — "कौन गने पुर बन नगर, कामिनि एकै रीति।
देखत हरै विवेक कौं, चित हरै करि प्रीति॥"

आलंकारिकता या अलंकार-प्रियता —

रीतिकाल की सबसे बड़ी ~~विशेषता~~ कलागत विशेषता अलंकार निरूपण है। इस सन्दर्भ में आचार्य रामचन्द्र शुक्ल का विचार है, "अलंकार वर्णन की भिन्न-भिन्न प्रणालियाँ हैं, कहने के खास-खास ढंग हैं।"

इस काल के कवि कविता-सुन्दरी को अलंकारों से सुसज्जित करने में अपनी कवि-कर्म समझा है। दरबारी मनोवृत्ति के कारण रीतिकालीन कवियों ने अपने काव्य में आलंकारिकता का वर्णन किया है। अलंकारों के प्रति इन कवियों का मोह प्रबल था। केशवदास जी ने इसका पक्ष लेते हुए लिखा है—

"जदपि सुजाति सुलच्छनी सुबरन सरस सुवृत्त।
भूषण बिनु न बिराजई कविता वनिता मित्त॥"

रीतिकाल के कवियों ने लगभग सभी अलंकारों का प्रयोग अपने काव्य में किया है। जैसे- सादृश्यमूलक, विरोधाभास, सम्भावना, अतिशयमूलक आदि। उत्प्रेक्षा अलंकार की प्रचुरता के कारण इस काल के काव्य में कल्पना की ऊँची उड़ान देखने को मिलता है। उत्प्रेक्षा अलंकार का सटीक एवं मनोहारी वर्णन बिहारी ने अपने काव्य में की है—

"सोहत ओढ़ैं पीत पट स्याम सलोने गात।
मनौं नीलमनि सैल पर आतप पर्‌यौ प्रभात॥"

आश्रयदाताओं की प्रशंसा—

रीतिकाल के अधिकतर कवि किसी-न-किसी राजा के आश्रय में रहते थे। इसलिए यह स्वाभाविक था कि वे अपने आश्रयदाताओं की प्रशंसा में काव्य रचना करते। इसी लिए देव ने अपने आश्रयदाता भवानी सिंह के लिए 'भवानी विलास' तथा कुशल सिंह के लिए 'कुशल विलास' की रचना की, तो भूषण ने शिवाजी के लिए 'शिवराज भूषण', 'शिवा बावनी' तथा छत्रसाल बुन्देला की प्रशंसा में 'छत्रसाल दशक' की रचना की।

सूदन ने भरतपुर के राजा सुजान सिंह की प्रशंसा में 'सुजान चरित' लिखा। इन दरबारी कवियों को जीविकोपार्जन के लिए इनके आश्रयदाताओं के द्वारा धन मिलता था। इसलिए अपने आश्रयदाताओं का गुणगान करना रीतिकाल के कवियों की विवशता थी।

भक्ति एवं नीति ——

यद्यपि रीतिकालीन कवियों प्रमुख प्रतिपाद्य विषय तो श्रृंगार है, तथापि कुछ भक्ति एवं नीति परक कविताएँ भी वे लिखते थे। इस काल के कवियों ने राधा-कृष्ण की प्रेम लीलाओं का वर्णन करते हुए जो रचनाएँ की हैं, उसमें श्रृंगारिकता के साथ-साथ भक्ति भावना भी विद्यमान है। बिहारी के निम्न दोहा में भक्ति भावना की झलक देखी जा सकती है ——

"अमरुरि मुँह तरहरि परयौ इहि बरहरि चित लाउ।
विषय तृषा परिहरि अजौं नरहरी के गुन गाउ॥"

दरबारी संस्कृति के प्रभाव में आकर रीतिकाल के कवियों ने नीति सम्बन्धी उक्तियों को भी अपने काव्य में निबद्ध किया है। बिहारी सतसई में नीति सम्बन्धी अनेक दोहे हैं। विनय सम्पन्न व्यक्ति जीवन में उन्नति करता है। इस कथन की पुष्टि बिहारी के निम्न दोहे में देखा जा सकता है-

"नल की अरु नलनीर की गति एकै करि जोय।
जेतो नीचौ ह्वै चलै तेतो ऊँचो होय॥"

ऐसे ही घाघ, लेताल, वृन्द, गिरधरदास ने नीति सम्बन्धी काव्य की रचना की है। वृन्द ने अपने 'वृन्द सतसई' में नीति सम्बन्धी

उक्तियों को काव्य रूप दिया है, जैसे यह दोहा—

"भले बुरे सब एक सम जौं लौं बोलत नाहिं।
जानि परत है काग पिक ऋतु बसन्त के माहिं॥"

प्रकृति चित्रण —

रीतिकालीन कवियों ने अपने काव्य में प्रकृति का चित्रण उद्दीपन रूप में किया है। आलम्बन रूप में चित्रण बहुत कम हुआ है। नायक-नायिका की मानसिक दशा के अनुकूल प्रकृति का भी संयोगकाल में सुखद एवं वियोगकाल में दुःखद रूप में चित्रण रीतिकालीन कवियों ने किया है। सेनापति, बिहारी आदि जैसे एक दो कवियों ने ही प्रकृति का मनोरम चित्रण किया है। वर्षाकाल का चित्रण सेनापति ने इस रूप में किया है—

"सेनापति उनए नए जलद सावन के,
चारिहू दिसन घुमरत भरे तोय के।
सोभा सरसानै न बखाने जात केहूँ भाँति,
आने हैं पहार मानों काजर को ढोय के॥"

पद्माकर बसन्त का वर्णन अद्भुत रूप में करते हुए लिखते हैं—

"कूलन में केलि में कछारन में कुंजन में,
क्यारिन में कलित कलीन किलकन्त है।"

"द्वार में दिसान में दुनी में देस-देसन में,
देखी दीप दीपन में दीपत दिगन्त है।
बीथिन में ब्रज में नवेलिन में बेलिन में,
बनन में, बागन में बगर्यौ बसन्त है॥"

बिहारी निम्न दोहा में वासन्ती मकरन्द से तृप्त भौंरों का अत्यन्त मनोरम चित्रण किया है—

"छकि रसाल सौरभ सने मधुर माधवी गन्ध।
ठौर-ठौर झौंरत झपत भौंर-झौंर मधु अन्ध॥"

मुक्तक काव्य की रचना —

यद्यपि रीति काल में कुछ प्रबन्ध काव्य लिखे गये हैं, परन्तु रीतिकालीन कवियों ने मुक्तक काव्य की रचना ही अधिक की है, इसका कारण है राजदरबारों में कवियों के बीच प्रतिस्पर्द्धा। इस सन्दर्भ में आचार्य रामचन्द्र शुक्ल का मत है, "यदि प्रबन्ध काव्य विस्तृत वनस्थली है, तो मुक्तक एक चुना हुआ गुलदस्ता। इसी से वह सभा-समाजों के लिए अधिक उपयुक्त होता है।" रीतिकाल में आलंकारिकता, चमत्कारप्रियता एवं बहुज्ञता का प्रदर्शन करने के लिए कवियों ने मुक्तक काव्य की रचना की है।

नायिका भेद —

रीतिकालीन कवियों ने अपने काव्य में नायिकाओं के सामाजिक व्यवहार, नायक के साथ संयोग एवं वियोग, स्वभाव, प्रेम, यौवन-क्रीड़ा आदि गुणों के आधार पर नायिकाओं के ~~[illegible]~~ न जाने कितने भेद किये हैं। प्रायः नायिकाओं के तीन भेद — स्वकीया, परकीया और सामान्या या वेश्या ही प्रचलित थे, फिर भी विभिन्न प्रकार से नायिकाओं का वर्णन रीतिकालीन कवियों ने किया है। बिहारी ने नव-यौवना परकीया नायिका के अंग-अंग में उमड़ने वाली सौन्दर्य की लपट का बड़ा ही मनमोहक वर्णन किया है, जिसके परिणामस्वरूप वह सुन्दरी पतले शरीर वाली होने पर भी गदकारी लग रही है —

"अंग-अंग छवि की लपट उपटति जाति अछेह।
खरी पातरीऊ, तऊ लगै भरी सो देह॥"

बहुज्ञता —

लोक और शास्त्र आदि ज्ञान के आधार पर ही कोई कवि सुन्दर, सरस एवं सटीक काव्य की रचना कर सकता है। इसलिए किसी कवि के पांडित्य एवं बहुज्ञता के लिए लोक और शास्त्र आदि ज्ञान का होना आवश्यक बताया गया है। रीतिकालीन कवियों ने अपनी बहुज्ञता का प्रदर्शन करने के लिए अलंकारों का सहारा लिया है। बिहारी जैसे कवियों के काव्य में ज्योतिष, आयुर्वेद, पुराण, गणित, नीतिशास्त्र, काव्यशास्त्र, चित्रकला आदि अनेक विषयों की विशद जानकारी दृष्टिगोचर होती है।

निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि रीति काल के कवियों ने कवित्त, सवैया, दोहा अधिक मात्रा में लिखे हैं। इस काल के कवियों ने जहाँ एक ओर लक्षण ग्रन्थ लिखकर काव्यशास्त्र से परिचित कराया तो वहीं दूसरी ओर शृंगार प्रधान काव्य रचना करके काव्य में माधुर्य भाव का समावेश किया। बिहारी, देव, सेनापति, पद्माकर, केशवदास, घनानन्द, भिखारीदास जैसे सशक्त कवियों ने अपनी रचनाओं से रीतिकाल को समृद्ध व सम्पन्न बनाया।

डॉ० रानेश कुमार
हिन्दी विभाग
शेरशाह महाविद्यालय, सासाराम, रोहतास